- केवल अपने चिन्तन और अपने सामाजिक दर्जे के दम पर अरस्तु (384–322 ई.पू.) ने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि पृथ्वी ब्रम्हाण्ड के केन्द्र में है और सूर्य तथा बाकी ग्रह उसका चक्कर लगाते हैं। सभी ने इस बात को मान लिया। यह सहज समझ में आने वाली बात थी कि ठोस पृथ्वी गति नहीं कर सकती। सोलहवीं शताब्दी में कोपर्निकस ने थोड़े अनिश्चय के साथ इसके उलट बात सुझाई कि सूर्य केन्द्र में है और पृथ्वी तथा अन्य ग्रह उसका चक्कर लगाते हैं। पर कोपर्निकस भी इस निष्कर्ष पर अवलोकन द्वारा नहीं पहुँचा। वह विचार करके यहाँ पहुँचा।

**इस बात से विद्यार्थियों व शिक्षकों द्वारा निकाले जा सकने वाले बिन्दु:** फिर जब सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में गैलिलियो ने अपने टैलिस्कोप से यह साबित कर दिया कि कोपर्निकस सही था तो उसे विरोध का सामना करते हुए जेल क्यों जाना पड़ा? ऐसी कौन सी चहेती मान्यताएँ हैं जिन्हें हम पकड़े रहते हैं और छोड़ना नहीं चाहते। तब भी नहीं जब उसके विपरीत पर्याप्त साक्ष्य मौजूद हों?

- पानी की बूँदों में चलते सूक्ष्म जीवों के बारे में वान ल्यूवेनहॉक की खोज: तब तक लोग यही मानते थे कि पानी की बूंदों में कोई जीवित चीज़ नहीं होती है।

**इस बात से विद्यार्थियों व शिक्षकों द्वारा निकाले जा सकने वाले बिन्दु:** इसी तरह, हम अपने आसपास की चीज़ों के बारे में क्या धारणाएँ बनाते हैं? हम उन्हें सही/गलत कैसे साबित कर सकते हैं?

ऊपर दिए गए उदाहरणों को शुरुआत बिन्दु की तरह इस्तेमाल करते हुए, शिक्षक बच्चों के साथ कक्षा में रोचक गतिविधियाँ कर सकते हैं, जो निस्संदेह शिक्षकों व बच्चों, दोनों को ही सीखने के भरपूर मौके देंगी।

कहा जाता है कि बल्ब के तन्तु के लिए एडिसन को हज़ारों भिन्न–भिन्न तन्तुओं को आजमाना पड़ा था ताकि उम्दा रोशनी देने वाले तथा लम्बे समय तक चल सकने वाले सही पदार्थ का चुनाव हो सके। आखिरकार उसने सही पदार्थ खोज लिया। जब किसी अखबार के एक रिपोर्टर ने उससे पूछा कि सही पदार्थ चुनने के पहले हज़ारों दफा असफल होने पर उसे कैसा लगा, तो उसका जवाब था: 'मैं एक बार भी असफल नहीं हुआ! बस मेरे प्रयोग में हज़ारों सीढ़ियां थीं।'

***नीरजा राघवन, पीएच.डी., अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, बंगलौर में एकेडेमिक्स तथा पैडागॉजी सलाहकार हैं। उनसे इस पते पर सम्पर्क किया जा सकता है: neeraja@azimpremjifoundation.org***

# मैंने विज्ञान क्यों चुना

## समझ की तलाश

***ऊषा पोनप्पन***



जब मैंने अपने अन्तर्मन से यह जानना चाहा कि मैंने विज्ञान को अपना कार्यक्षेत्र क्यों चुना, तब मैंने पहली बार अपने विद्यार्थी जीवन में झाँककर उस खास क्षण को ढूँढ़ने की कोशिश की जो इस दिशा का निर्णायक मोड़ था। सच तो यह कि कोई एक ऐसी खास घटना नहीं थी जिसने विज्ञान में मेरे भविष्य की बुनियाद रखी। मेरे खयाल से कई परस्पर असम्बन्धित घटनाओं की ऐसी शृंखला थी जिसने मेरी सोच को विकसित किया और जो अन्ततः मुझे इस रोमांचक मार्ग पर लाई जिसे मैं आज इतना चाहती हूँ।

वैज्ञानिक लेख लिखते समय हम प्रयोग की संकल्पना की रूपरेखा देते हैं और फिर परिणामों की शृंखला होती है जो निष्कर्षों तक ले जाती है। किन्तु विज्ञान को अपना कार्यक्षेत्र चुनने के बारे में लिखना, इससे भिन्न है। यह अधिकांश रूप से मेरी स्मृति और प्रारम्भिक जीवन की घटनाओं से सम्बन्धित कुछ किस्सों पर आधारित है। मेरा रुझान हमेशा जीवविज्ञान के प्रति रहा। उसमें मैं अच्छा प्रदर्शन करती रही। यद्यपि मैं निश्चित तौर पर नहीं कह सकती कि जीवविज्ञान के लिए मुझमें कोई जन्मजात प्रतिभा थी या यह मेरे मार्गदर्शकों का प्रभाव था जिसने इसे मेरी सहज प्रवृत्ति बना दिया।

यदि किसी घटना को निर्णायक मोड़ कह सकते हैं, तो वह थी हाईस्कूल पूरा करने पर मुझे राष्ट्रीय वैज्ञानिक प्रतिभा छात्रवृत्ति मिलना। एनसीईआरटी द्वारा दी जाने वाली इस योग्यता छात्रवृत्ति ने बुनियादी विज्ञान के मार्ग पर भविष्य के वैज्ञानिकों के निर्माण को प्रोत्साहित किया है। छात्रवृत्ति परीक्षा का एक महत्वपूर्ण पहलू जो मेरी स्मृति में अंकित है, वह छात्रवृत्ति आवेदन के साथ भेजी गई मेरी प्रोजैक्ट रिपोर्ट। वह नर्वस सिस्टम में सेल्यूर कम्युनिकेशन से सम्बन्धित थी। प्रसंगवश, नर्वस

सिस्टम में सेल्यूर कम्युनिकेशन तथा उसकी क्रिया क्षमताओं में अभी भी मुझे रुचि है। मेरा प्रमुख ध्यान अब इस पर केन्द्रित है कि प्रतिरोध तंत्र में कोशिकाएँ कैसे सम्प्रेषण करती हैं। अपने चुनाव और अपनी कार्ययात्रा को पीछे मुड़कर देखने पर मैं कह सकती हूँ कि वैज्ञानिक प्रतिभा छात्रवृत्ति ने मेरे लिए वे दरवाज़े खोल दिए जो अन्यथा उतनी आसानी से मेरे लिए नहीं खुलते।

सचमुच इस अवसर ने मुझे अपनी महत्वाकांक्षाओं की ओर बढ़ने के लिए जोरदार आवेग और प्रोत्साहन प्रदान किया। ऐसे ही उपक्रमों की सहायता से विज्ञान को बढ़ावा देने और वैश्विक अर्थव्यवस्था में युवा पीढ़ी को प्रतिस्पर्धा करने योग्य बनाने के महत्वाकांक्षी लक्ष्य को हासिल किया जा सकता है। एनसीईआरटी, स्नातक और स्नातकोत्तर शिक्षा के दौरान गर्मियों की छुट्टियों में शोध–केन्द्रित प्रशिक्षण देने के लिए भी छात्रवृत्ति देती थी, ताकि विद्यार्थियों के युवा मन को शोध,जिज्ञासा के लिए ढाला और प्रशिक्षित किया जा सके। मैं मानती हूँ कि कम से कम मेरे मामले में तो यह कार्यक्रम सफल रहा। चूँकि शोध के लिए मुझमें सहज अभिरुचि थी, इसलिए इससे मुझे मनचाहा अवसर और प्रोत्साहन मिला। इस छात्रवृत्ति ने मुझे स्नातकोत्तर अध्ययन के लिए उचित संस्थान चुनने और एक बहुत जाने–माने वैज्ञानिक को अपना मार्गदर्शक चुनने में भी मेरी मदद की। मेरे लिए तो यह एक उपहार था। मेरे अधिकांश साथियों को अपनी इच्छित प्रयोगशाला चुन सकने की सुविधा नहीं थी, आमतौर पर जो उपलब्ध था, उन्हें उसी में से चुनना था।

अब बड़े प्रश्न पर आएँ: मैं वैज्ञानिक क्यों बनी? प्रश्नों को हल करने की महिमा अपने आप में पर्याप्त प्रेरक तत्व है। फिर भी, मुझे लगता था कि वैज्ञानिक होने में सबसे अच्छी बात है किसी भी प्रतिमान के – चाहे वह जीवविज्ञान में हो या चिकित्सा विज्ञान में – काम करने के रहस्य को समझने का प्रयास। इसकी अतिरिक्त विशेषता है, इस समझ को व्यक्ति का स्वास्थ्य सुधारने के लिए कारगर उपचारों में बदलने की योग्यता। अतः समझने की तलाश ने ही मुझे वहाँ पहुँचाया जहाँ मैं आज हूँ। यहाँ चुनौती, कुछ नया करने और समस्याओं को हल करने के अवसर विज्ञान देता है। यहाँ वैज्ञानिक के रूप में व्यक्ति बच्चे जैसी जिज्ञासा से प्रश्न पूछना जारी रख सकता है।

स्नातक शिक्षा के दौरान मेरा लक्ष्य संतति–निरोध के टीके खोजने के उद्देश्य से नए विकसित हो रहे प्रजनन प्रतिरोधन के क्षेत्र में क्रियाविधियों और स्थानान्तरण अभिक्रमों पर काम करना था। इसके पीछे भारत में जनसंख्या नियंत्रण की बढ़ती हुई आवश्यकता को हल करने में सहयोग देने की कामना थी। नए स्नातक विद्यार्थी की तरह शीघ्र ही मुझे अहसास हुआ कि यद्यपि मेरे लक्ष्य तो ऊँचे थे, प्रयोगशाला में उनको हासिल करने का प्रयास चुनौती भरा था। फिर भी परेल, मुम्बई स्थित आईसीएमआर के संस्थान, इंस्टीट्यूट फॉर रिसर्च इन रिप्रोडक्शन (प्रजनन शोध संस्थान) में अपनी स्नातक शिक्षा को पीछे मुड़कर देखने पर मैं अनेक प्यारी स्मृतियाँ पाती हूँ। यही वह जगह थी, जहाँ मैंने वैज्ञानिक तलाश का सारसूत्र समझा। यह सत्य जाना कि कैसे हर प्रयोग, चाहे उससे आशानुकूल परिणाम निकले या न निकले, अन्ततः हमें कुछ सिखाता है। यहीं मैंने अपनी जाँच–पड़ताल, वैज्ञानिक प्रस्तुतिकरण और सम्प्रेषण की क्षमताओं को प्रखर बनाया।

> *दो सम्भावित नतीजे होते हैं। यदि परिणाम परिकल्पना की पुष्टि करता है, तो आपने एक खोज की है। यदि परिणाम परिकल्पना के विपरीत है, तो भी आपने एक खोज की है।*
>
> *– ऐनरिको फर्मी*

स्कूलों में विज्ञान जैसे पढ़ाया जाता है, इसकी मेरी स्मृतियाँ और अनुभव हैं। यह कैसे भिन्न हो सकता है, मैं इस सबके बारे में लम्बे समय से सोचती रही हूँ। मैं विश्वविद्यालय में, स्नातकोत्तर शिक्षा में और चिकित्सा शिक्षा में, शिक्षण से घनिष्ठ रूप से जुड़ी हूँ। सिर्फ तथ्यों को बताने के बजाय प्रश्न पूछने की पद्धति द्वारा पढ़ाने में मुझे सबसे अधिक आनन्द आता है। मैं पाती हूँ कि मेरे विद्यार्थी सबसे अधिक तब सीखते हैं जब वे प्रयोगों की रचना करने में, या किसी मॉडल का परीक्षण करने के लिए उपयुक्त प्रश्न गढ़ने में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं। परन्तु, जैसा कि मुझे याद है, हमारे स्कूलों में विज्ञान अक्सर सीधे जानकारी प्रदान करने के ढंग से पढ़ाया जाता है। इस अपेक्षा के साथ कि विद्यार्थी उसे रटकर याद कर लेंगे, और परीक्षाओं में, जो ज्ञान पाने की इस पद्धति की ही जाँच करने के लिए बनाई गई होती हैं, उस जानकारी को वापस प्रस्तुत कर देंगे। किसी परिकल्पना का परीक्षण करने के लिए प्रश्न गढ़कर किसी विषय की गहरी समझ बनाने पर और अवधारणात्मक ज्ञान पर शायद ही कोई जोर दिया जाता था। प्रश्न पूछने को बढ़ावा तो दिया जाता था, पर वे प्रायः विद्यार्थियों से पूछे जाते थे। दोनों ओर से होने वाले प्रश्नोत्तर के दौर केवल दोहराने वाले सत्रों तक ही सीमित थे, जो बहुत ही कम होते थे। मेरा व्यक्तिगत विचार है कि हमारे हाईस्कूल पाठ्यक्रम के अन्तर्गत प्रयोगशालाओं में प्रयोग करते हुए – चाहे रसायनशास्त्र के, भौतिक शास्त्र के या जीवविज्ञान के– हमने करके देखने का जो अनुभव पाया, उसी ने हमारे तकनीकी कौशल और समस्याओं को हल करने के कौशल की बुनियाद रखी। विज्ञान कैसे काम करता है,

यह देखने के लिए स्वयं प्रयोग करने के ऐसे सजीव तरीकों पर यदि अधिक समय लगाया जाए तो इससे विज्ञान की ओर उन्मुख युवा शक्ति को विकसित करने में निश्चित ही मदद मिलेगी। अब, जबकि हम एक जानकारी–बहुल समाज में जी रहे हैं, जहाँ उत्कृष्ट पाठ्यपुस्तकें और अन्य स्रोत पुस्तकें उपलब्ध हैं, विद्यार्थियों को कक्षा में आने से पहले पाठ्यसामग्री को पढ़कर आने की सलाह देना चाहिए, और कक्षा में होने वाला शिक्षण, चर्चाओं और बौद्धिक आदान–प्रदान पर केन्द्रित होना चाहिए। अवधारणाओं को आत्मसात करने के लिए पर्याप्त समय दिया जाना चाहिए, और मुख्य विषयों के बारे में गहरी अन्तर्दृष्टि प्रदान की जाना चाहिए ताकि कक्षा में बिताए गए समय का उपयोग ज्ञान को आत्मसात करने और विचार करने के लिए हो सके।

मैं सच में मानती हूँ कि कक्षाओं में ऐसा नया नज़रिया, शिक्षा में क्रान्तिकारी बदलाव लाएगा और विद्यार्थियों को जीवनपर्यन्त सीखने वाले और उत्साहपूर्वक समस्याओं का समाधान करने वाले बनने की क्षमता प्रदान करेगा। इसका साफ–साफ अर्थ है कि राष्ट्र की तरह हमें शिक्षकों में निवेश करना होगा – शिक्षक जो अत्यन्त कुशल हों – क्योंकि सिर्फ वे ही हमारे देश के युवाओं में समझने की अन्तर्निहित तीव्र जिज्ञासा जगाकर उन्हें एक चमकदार और चुनौतीपूर्ण भविष्य की ओर ले जाने वाले प्रकाश स्तम्भ हो सकते हैं।

**ऊषा पोनप्पन, पीएच.डी., यूनिवर्सिटी ऑफ अरकेन्सॉस फॉर मेडिकल साइंसिज़, लिटिल रॉक, अरकेन्सॉस में माइक्रोबायलॉजी और इम्यूनोलॉजी की प्राध्यापक के रूप में शिक्षण और शोध में संलग्न हैं। उनसे इस ईमेल पते पर सम्पर्क किया जा सकता है : *PonnappanUsha@uams.edu***

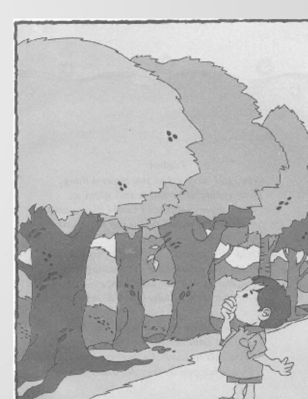
## पेड़ों की यूनिफार्म: छाल



ऐसा क्यों है, ओ स्फिंक्स, कि छालें पेड़ों की
कोई भी मनचाहा रंग नहीं पा सकतीं
कत्थई रंग की दिखतीं सारी एक समान
फरक हैं पर पेड़ों के फल, फूल और नाम?

प्रकृति ने फूलों, फलों, पशुओं और पक्षियों पर अपनी तूलिका से तमाम रंग बिखेरे हैं। परन्तु जब पेड़ों की छालों की बारी आई तो लगता है कि जैसे उसकी कल्पनाशक्ति चुक गई हो। सब पेड़ों की छाल कत्थई होती है, हालाँकि रंग की गहराई में थोड़ी विविधता होती है।

ऐसा क्यों है? प्रकृति निश्चित ही बहुत बुद्धिमान है। फूलों में रंगीन पंखुरियों को रचने के पीछे उसका एक उद्देश्य है। यदि फूल इतने आकर्षक नहीं होते, तो मधुमक्खियाँ और तितलियाँ इतनी आसानी से उनके पास उनका रस चूसने और परागण करने नहीं जातीं। परागण के बिना फूल प्रजनन कैसे करते? यह फूलों का सुन्दर स्वरूप ही है जो इन चंचल उड़ने वाले सन्देशवाहकों को अपनी ओर खींचता है, और फूलों की प्रजाति को बनाए रखने का इंतजाम करता है। लेकिन पेड़ों की छालों का ऐसा कोई काम नहीं है। उनकी भूमिका तो पेड़ के तने के लिए आवरण की तरह काम करने की है जिसमें आकर्षक दिखने की कोई ज़रूरत नहीं है। उसके जिन गुणों का महत्व है वे हैं: उनकी कठोरता और मजबूती, न कि उनका रंग। इसलिए प्रकृति ने पेड़ की छाल को मजबूत और कठोर बनाकर उसके इन्हीं पक्षों पर ध्यान दिया है।



असल में पेड़ की छाल में मौजूद मुख्य रासायनिक यौगिक, जो टैनिन कहलाते हैं, कत्थई रंग के होते हैं। उनके कारण ही पेड़ की छाल का रंग सब जगह एक–सा होता है। हाँ उस रंग की गहराई अलग–अलग पेड़ों में टैनिन की अलग–अलग मात्रा होने के कारण बदलती रहती है।

**नीरजा राघवन द्वारा लिखित, सुबीर रॉय द्वारा चित्रांकित और चिल्ड्रन्स बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित पुस्तक *'आई वन्डर व्हाइ'* (आईएसबीएन 81-7011-937-5) के पृष्ठ 86–87 से लिया गया अंश।**